

राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ

एसबी आपराधिक अपील संख्या 445/1991

1.मान सिंह पुत्र सामंताराम , निवासी ग्राम बरताई थाना कुम्हेर जिला
भरतपुर

2.मोहन सिंह पुत्र जगन सिंह, निवासी बीनारायण गेट बाहर भरतपुर ।
वर्तमान में जिला जेल, भरतपुर में बंद है)।

-----अपीलकर्ता

बनाम

राजस्थान राज्य में लोक अभियोजक के माध्यम से।

-----प्रतिवादी

-

अपीलकर्ताओं के लिए : श्री अमित सिंह शेखावत ,
श्री विपुल जैन और
श्री सुनील जैन

प्रतिवादी(ओं) के लिए : श्री अतुल शर्मा, पीपी

-

माननीय श्रीमान. जस्टिस अनूप कुमार ढांड

आरक्षित तिथि : 19/03/2024

उच्चारण तिथि : 09/04/2024

प्रकाशनीय

निर्णय

1. मामले में लगाए गए आरोपों की संवेदनशीलता और शिकायत किए गए अपराध की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, अभियोक्ता की पहचान की रक्षा करना अनिवार्य है। इसलिए, उसे घटना में "के" के रूप में दर्शाया गया है।
2. सत्र प्रकरण संख्या 88/1990 में सत्र न्यायाधीश, भरतपुर द्वारा पारित दिनांक 25.09.1991 के निर्णय द्वारा भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) की धारा 376 और 306 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए दोषी ठहराए जाने पर, अपीलकर्ताओं ने यह अपील प्रस्तुत की है।
3. दिनांक 25.09.1991 के आक्षेपित निर्णय के अनुसार, अपीलकर्ताओं को धारा 376 आईपीसी के तहत दंडनीय अपराध के लिए 10 वर्ष की अवधि के लिए कठोर कारावास (संक्षेप में 'आरआई') और प्रत्येक पर 500/- रुपये का जुर्माना लगाने का निर्देश दिया गया है, और चूक होने पर, अतिरिक्त छह महीने की आरआई भुगतने का निर्देश दिया गया है। उन्हें धारा 306 आईपीसी के तहत दंडनीय अपराध के लिए 5 वर्ष की आरआई भुगतने और प्रत्येक पर 500/- रुपये का जुर्माना लगाने की सजा सुनाई गई है और चूक होने पर, अतिरिक्त छह महीने की आरआई भुगतने की सजा सुनाई गई है।

4. पुलिस स्टेशन कुम्हेर, जिला भरतपुर में दिनांक 12.09.1989 को प्रथम सूचना रिपोर्ट (संक्षेप में 'एफ.आई.आर.')

प्र.5 प्राप्त होने पर कानूनी प्रक्रिया शुरू की गई, जिसमें शिकायतकर्ता पी.डब्ल्यू.-4 आसम ने आरोप लगाया कि 8 और 9 सितंबर, 1989 की मध्य रात्रि में, जब उसकी बेटी "के" (उम्र 13 वर्ष) और बेटा देशराज (उम्र 10 वर्ष) घर पर सो रहे थे, तब मान सिंह और मोहन सिंह आए और उसकी बेटी का मुंह बंद कर दिया और बेहोशी की हालत में उसके साथ बलात्कार किया। इसके बाद "के" ने उसके शरीर पर मिट्टी का तेल डाला और आग लगा दी। उसके बेटे ने शोर मचाया, जिस पर पड़ोसी उसे बचाने के लिए मौके पर पहुंचे। वह अपनी पत्नी और दो बेटों के साथ दिल्ली में काम करता था। इस घटना की जानकारी मिलने पर वह 10.09.1989 को शाम लगभग 7 बजे गाँव आया और "के" ने उसे पूरी घटना बताई और 11.09.1989 को उसे अस्पताल में भर्ती कराया गया। मोहन सिंह को गाँव वालों ने पकड़ लिया जहाँ उसने स्वीकार किया कि उसने ही यह घटना की है।

5. इस रिपोर्ट पर, धारा 376 भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत अपराध संख्या 244/1989 (प्रत्यक्ष पी6) पंजीकृत किया गया। विवेचना के दौरान, पीड़ित "के" की 08.10.1989 को मृत्यु हो गई, अतः धारा 306 भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत अपराध जोड़ा गया। सामान्य विवेचना के

बाद, अपीलकर्ताओं के विरुद्ध धारा 376 और 306 भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत आरोप पत्र दाखिल किया गया ।

6. विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ताओं के विरुद्ध उपरोक्त अपराधों के लिए आरोप विरचित किए और उनके द्वारा आरोप/दोष से इनकार करने पर मुकदमा प्रारंभ हुआ। मुकदमे के दौरान अभियोजन पक्ष द्वारा 11 गवाहों से पूछताछ की गई और 22 दस्तावेज प्रदर्शित किए गए। इसके बाद, आरोपी अपीलकर्ताओं से सीआरपीसी की धारा 313 के तहत स्पष्टीकरण मांगा गया , जिसमें उन्होंने अभियोजन पक्ष के आरोप से इनकार किया और खुद को निर्दोष बताया। इसके बाद, बचाव पक्ष में तीन गवाहों के बयान दर्ज किए गए और अपीलकर्ताओं द्वारा तीन दस्तावेज प्रदर्शित किए गए। फिर, विद्वान लोक अभियोजक और विद्वान बचाव पक्ष के वकील को सुनने और साक्ष्यों का सूक्ष्मता से मूल्यांकन करने के बाद, विद्वान न्यायाधीश ने अपीलकर्ताओं को दिनांक 25.09.1991 के निर्णय के तहत ऊपर बताई गई विधि के अनुसार दोषी ठहराया और सजा सुनाई, जिसे इस अपील में इस न्यायालय में चुनौती दी गई है।

7. अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील ने संयुक्त रूप से यह दलील दी कि कथित घटना की तारीख 8/9.09.1989 की मध्यरात्रि है, जबकि एफआईआर चार दिनों से अधिक की देरी के बाद दर्ज की गई थी।

वकील ने दलील दी कि बलात्कार के साथ-साथ आग से जलाने की कथित घटना दुर्भाग्यपूर्ण दिन यानी 8/9.09.1989 की मध्यरात्रि को हुई थी और घायल "के" की डॉक्टर द्वारा 12.09.1989 को चिकित्सकीय जांच की गई थी, जिसमें जलने की चोटों की अवधि 48 घंटों के भीतर पाई गई थी। वकील ने दलील दी कि बिना किसी कल्पना के यह साबित नहीं किया जा सकता है कि घटना 8/9.09.1989 की मध्यरात्रि में हुई थी। वकील ने आगे दलील दी कि यौन उत्पीड़न का कोई सबूत नहीं है क्योंकि घायल के निजी अंगों पर कोई चोट नहीं आई है। वकील ने दलील दी कि घायलों के कपड़े विश्लेषण के लिए फॉरेंसिक साइंस लैबोरेटरी (संक्षेप में 'एफएसएल') भेजे गए थे, लेकिन मुकदमे की समाप्ति तक एफएसएल की कोई रिपोर्ट प्राप्त नहीं हुई। इसलिए इन परिस्थितियों में, अपीलकर्ताओं के खिलाफ कथित घटना से उनका संबंध स्थापित करने के लिए कोई सबूत रिकॉर्ड में नहीं था। वकील ने दलील दी कि घायलों का दूसरा बयान (प्रदर्श-डी3) पुलिस अधिकारी - दीन द्वारा दर्ज किया गया था। दयाल (डीडब्ल्यू-3) में अपील की गई है, जिसमें उसने अपीलकर्ताओं के खिलाफ कोई भी आरोप नहीं लगाया है, बल्कि उसने कहा है कि खिड़की से लैंप गिरने के कारण उसके कपड़ों में आग लग गई थी। वकील ने कहा कि इन परिस्थितियों में, अभियोजन पक्ष उचित संदेह से परे अपीलकर्ताओं के खिलाफ आरोपों को साबित करने में विफल रहा है। वकील ने कहा कि रिकॉर्ड पर सबूत आए हैं कि मृतक के

पिता और अपीलकर्ताओं के बीच पैसे का विवाद था और उस दुश्मनी के कारण, अपीलकर्ताओं को इस मामले में झूठा मामला दर्ज किया गया है, लेकिन आरोपित निर्णय पारित करते समय, विद्वान ट्रायल जज ने उपरोक्त सभी तथ्यों और परिस्थितियों को समझने में विफल रहे हैं, जैसा कि विद्वान ट्रायल जज के समक्ष सुनाया गया है। वकील ने कहा कि इन परिस्थितियों में, ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित निर्णय को रद्द किया जा सकता है और अलग रखा जा सकता है।

8. इसके विपरीत, विद्वान लोक अभियोजक ने अपीलकर्ताओं के वकील द्वारा उठाए गए तर्कों का जोरदार विरोध किया है और प्रस्तुत किया है कि विद्वान ट्रायल न्यायाधीश ने रिकॉर्ड पर उपलब्ध साक्ष्य की उचित सराहना के बाद आक्षेपित निर्णय पारित किया है क्योंकि अभियोजन पक्ष ने उचित संदेह से परे अपीलकर्ताओं के अपराध को पूरी तरह से ठोस और निर्णायक साक्ष्य प्रस्तुत करके स्थापित किया है, इसलिए, इस अपील में आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है और अपील खारिज किए जाने योग्य है।

9. मैंने अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता और विद्वान लोक अभियोजक द्वारा प्रस्तुत दलीलों पर विचार किया है और निर्णय का अध्ययन किया है।

10. एफआईआर और रिकॉर्ड के अवलोकन से पता चलता है कि घटना 8 और 9 सितंबर, 1989 की मध्य रात्रि को हुई थी और एफआईआर (एक्स.पी5) पीड़िता के पिता यानी पीडब्लू-4 आसम द्वारा 12.09.1989 को दर्ज कराई गई थी और उसके बाद पीड़िता "के" के बयान दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में ' सीआरपीसी ') की धारा 161 के तहत 12.09.1989 को (एक्स.पी16) दर्ज किए गए थे, जिसमें उसने आरोप लगाया था कि उसके माता-पिता और दो भाई दिल्ली में रहते हैं और वह अपने भाई देशराज के साथ घर पर रहती थी । घटना के समय लगभग 9-10 बजे सुबह उसका भाई देशराज घर पर नहीं था और मान सिंह और मोहन सिंह आए और उसके मुंह को कपड़े से ढक दिया और उसके साथ बलात्कार किया। उसकी योनि से खून बह रहा था और उसका ' पेटीकोट ' खून और वीर्य से सना हुआ था। नहाने के बाद उसने कपड़े धोए लेकिन उसकी हालत गंभीर हो गई और वह सो रही थी और उसका भाई देशराज दूसरे कमरे में सो रहा था। रात करीब 8-9 बजे दोनों नशे की हालत में फिर आए और दरवाजा बंद कर दिया और उसके साथ फिर से बलात्कार किया और उसका मुंह कपड़े से ढक दिया ताकि वह आवाज न उठा सके। आवाज सुनकर उसका भाई देशराज आ गया और फिर दोनों आरोपी भाग गए। फिर उसने मिट्टी का तेल डालकर खुद को आग लगा ली। शोर मचाने पर गांव वालों ने आकर उसे बचाया।

उसके कपड़े जल गए और कपड़ों का कुछ हिस्सा वहीं रह गया जहाँ वीर्य के धब्बे थे।

11. अगले दिन यानि 13.09.1989 को पीड़िता "के" का पुनः पर्चा बयान (एक्स.डी3) डीडब्लू-3 डीड दयाल द्वारा सामान्य चिकित्सालय, भरतपुर में दर्ज किया गया , जिसमें उसने बताया कि उसके माता-पिता दिल्ली में थे और तीन दिन पहले वह अपने भाई के साथ घर पर थी और रात्रि में लगभग 7-8 बजे जब उसने दीपक बुझाने का प्रयास किया तो दीपक उसके शरीर पर गिर गया जिससे उसके कपड़ों में आग लग गई और उसका शरीर जल गया। न तो किसी ने उसे आग लगाई थी और न ही उसने स्वयं आग लगाई थी।

12. पीडब्लू-1 डॉ. द्वारा दिनांक 12.09.1989 को पीड़िता "के" की चिकित्सीय जांच की गई। बनय सिंह ने उसकी मेडिको लीगल रिपोर्ट (संक्षेप में 'एमएलआर') एक्स.पी1 तैयार की और उसके शरीर पर निम्नलिखित चोटें पाईं:

- | | |
|--------------------------------|-----------------|
| “1. गर्दन के आगे के हिस्से को | गहरी जलन |
| 2. छाती के ऊपरी हिस्से में 1/3 | गहरी जलन |
| 3. आरटी ब्रेस्ट लगभग सभी. | गहरी जलन |
| 4. दाहिना कंधा फफोलों के साथ | 4 सेमी x |
| 3) सेमी | |
| 5. बायां कंधा | 5 सेमी x 4 सेमी |

6. बाईं भुजा 6 सेमीx5 सेमी,
पार्श्व में।
7. दायां हाथ एम. छाते 6 सेमी-4 सेमी x
5 सेमी-4 सेमी
8. लंबी लकड़ी का क्षेत्र 4 सेमी x 3 सेमी
9. पीछे का ऊपरी भाग 1/3
10. दायां और बायां जांघ मध्य 1/3
11. सिर के बाल जल गए।

जलने की अवधि 48 घंटे के भीतर।

गाल, स्तन, जांघों और शरीर के अन्य भागों पर खरोंच या खरोंच का कोई निशान नहीं।

जननांग : - जननांग भागों पर कोई बाहरी चोट का निशान नहीं देखा गया।

आगे की राय के लिए स्त्री रोग विशेषज्ञ की राय ली गई।

पी.वी. निष्कर्ष - स्त्री रोग विशेषज्ञ की राय आवश्यक है।

पीड़िता की आयु:-

(i) सामान्य विन्यास - शरीर के अंग पोषित और छोटे कद के।

बाल - जघन, सहायक बाल मौजूद।

आवाज - नर घोड़े जैसी

मासिक धर्म - नियमित

स्तन - खराब विकसित।

दांत										ऊपरी जबड़ा							
8	7	6	5	4	3	2	1	1	2	3	4	5	6	7	8		
										नीचला जबड़ा							

उपरोक्त निष्कर्षों के अनुसार पीड़िता की आयु 17 वर्ष से अधिक है, आगे आयु निर्धारण के लिए रेडियोलॉजिस्ट की राय आवश्यक है।

एम/आई पुराना निशान 2 सेमी x 1) सेमी लेफ्ट. पैर 1/3 पार्श्व में नीचे।

स्त्री रोग विशेषज्ञ की राय के बाद बलात्कार के संबंध में राय

राय -

रासायनिक परीक्षक की रिपोर्ट के बाद संभोग के लिए अंतिम राय दी जा सकती है।”

13. इसके बाद, पीड़िता का परीक्षण मेडिकल ज्यूरिस्ट पी.डब्ल्यू.8 डॉ. अशोक कुमार वर्मा द्वारा किया गया , जो प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, कुम्हेर , जिला भरतपुर में तैनात थे और उन्होंने पीड़िता के गुप्तांगों के परीक्षण के संबंध में 12.09.1989 को एमएलआर (एक्स.पी1) तैयार की। उनकी रिपोर्ट इस प्रकार है:

“जननांगों की जांच

मेजोरा और माइनोरा का परीक्षण अच्छी तरह से विकसित है। जननांगों पर कोई चोट नहीं दिखी। कोई कोमलता नहीं, हाइमन पूरी तरह से नहीं है जिससे एक उंगली आसानी से अंदर जा सके, कोई असामान्य स्राव मौजूद है।"

योनि स्राव से स्लाइड तैयार की गई और सूक्ष्मदर्शी से जाँच की गई, शुक्राणु नहीं दिखे। एक स्लाइड रासायनिक परीक्षण के लिए भेजी गई। वीर्य के किसी भी प्रमाण की जाँच की जा रही है।

एमआई - पुराना निशान 2 x 1) सेमी बाएं पैर के निचले 1/3 पार्श्व में।

राय - संभोग के संबंध में अंतिम राय रासायनिक परीक्षक की रिपोर्ट के बाद दी जाएगी।

14. अपनी जिरह में, उन्होंने बताया कि पीड़िता की योनिच्छद (हाइमन) पूरी तरह सुरक्षित नहीं पाई गई। उसकी योनिच्छद (हाइमन) एक उंगली आसानी से अंदर जा रही थी और उसके शरीर के बाहरी व गुप्तांगों पर किसी भी प्रकार की चोट के निशान नहीं पाए गए। योनि स्राव से स्लाइड तैयार कर सूक्ष्मदर्शी से जाँच की गई, लेकिन शुक्राणु नहीं मिले। इसलिए, यौन संबंध के बारे में राय लेने के लिए उसके योनि के नमूने को फॉरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला (संक्षेप में 'एफएसएल') में विश्लेषण हेतु भेजा गया।

15. जब पीडब्लू-1 डॉ. बन्नी सिंह के बयान दर्ज किए गए, उन्होंने अपनी मुख्य परीक्षा में स्वीकार किया कि पीड़िता के शरीर पर कोई वीर्य

या अन्य धब्बे नहीं पाए गए थे और सभी चोटों की अवधि 48 घंटों के भीतर की पाई गई थी और उसके गालों, स्तनों, जांघों और शरीर के अन्य गुसांगों पर कोई चोट नहीं पाई गई थी और बलात्कार के संबंध में स्त्री रोग विशेषज्ञ की राय मांगी गई थी। अपनी जिरह में इस गवाह पीडब्लू-1 डॉ. बनय सिंह ने इस बात से इनकार किया है कि पीड़िता को 11 तारीख को अस्पताल में भर्ती कराया गया था, लेकिन उन्होंने स्वीकार किया कि जलने की चोटें 48 घंटों के भीतर थीं।

16. पोस्टमार्टम रिपोर्ट (संक्षेप में 'पीएमआर') एक्स.पी4, पीडब्लू-2 डॉ. अजय कपूर द्वारा 09.10.1989 को तैयार की गई थी और उन्होंने पाया कि मृतका की योनिच्छद फटी हुई थी और मृत्यु का कारण जलने के कारण सेप्टीसीमिया पाया गया था । उन्होंने अपनी जिरह में स्वीकार किया कि पीएमआर में जलने के प्रतिशत का उल्लेख नहीं किया गया था, लेकिन मृतका 75% से अधिक जली हुई थी। उसकी गर्दन जली हुई थी, लेकिन वह इतनी जलने की चोटों के बावजूद बोल सकती थी।

17. रेडियोलॉजिस्ट (पीडब्लू-5) डॉ. सतीश चंद व्यास ने पीड़िता का अस्थिकरण परीक्षण किया और उन्होंने अपनी रिपोर्ट एक्स.पी10 तैयार की, जिससे पता चलता है कि पीड़िता की आयु 14 वर्ष से अधिक और 16 वर्ष से कम थी।

18. घटना की जांच पीड़िता/मृतका के पिता द्वारा 12.09.1989 को दर्ज कराई गई एफआईआर (एक्स.पी5) के आधार पर की गई, जो उसे 12.09.1989 को अस्पताल ले गए थे। इस गवाह (पीडब्लू-4) आसम के अदालती बयानों के अनुसार , वह दिल्ली में रह रहे थे और उनके गांव के एक व्यक्ति ने दिल्ली में उनके घर पर उनकी बेटी के साथ बलात्कार के अपराध के बारे में एक पत्र दिया था। फिर वह 10-11.9.1989 की तारीखों को बरतई गांव आए और अपनी बेटी से घटना के बारे में पूछताछ की और उसने पूरी घटना उन्हें बताई जिसमें उसने अपने पिता को बताया कि मोहन सिंह और मान सिंह ने उसके साथ बलात्कार किया है और उसने खुद को आग लगा ली है। फिर, वह अपनी बेटी को 12 तारीख को कुम्हेर ले गए और पुलिस में घटना की रिपोर्ट दर्ज कराई। जिरह में उसने इस बात से इनकार किया कि उसने मोहन सिंह से 900 रुपये उधार लिए थे और उसे चुकाने से बचने के लिए रिपोर्ट दर्ज कराई थी। उसने स्वीकार किया कि वह 11 तारीख को शाम 6 बजे अपने गांव आया था लेकिन वह अपनी बेटी को इलाज के लिए पुलिस स्टेशन और अस्पताल नहीं ले गया। वह उसे अगले दिन सुबह अस्पताल ले गया और एक्स.पी5 के तहत रिपोर्ट दर्ज कराई। उसने जिरह में इस बात से इनकार किया कि उसके भाई गणेशी , खजानी और उसके पड़ोसी सुल्तान, पाली और हरि सिंह ने उसे बताया कि उसकी बेटी को लैंप बुझाते समय आग लग गई। उसने स्वीकार किया कि 2-3 साल पहले

उसने अपना खेत मान सिंह को खेती के लिए दिया था और उसने उससे 6,000 रुपये लिए थे । उसने मान सिंह को उक्त रकम ब्याज सहित लौटा दी

19. पीड़िता का भाई, पी.डब्लू.-3 देशराज , इस घटना का मुख्य गवाह है। उसने बताया है कि वह और उसकी बहन अलग-अलग कमरों में सो रहे थे और अपनी बहन की आवाज़ सुनकर वह आया और देखा कि मान सिंह और मोहन सिंह दोनों वहाँ थे और वे भाग गए। कुछ देर बाद उसकी बहन ने मिट्टी का तेल डालकर खुद को आग लगा ली। उसकी बहन ने पेट्रीकोट पहना हुआ था और उसके कपड़ों पर सफेद धब्बे थे। उसकी बहन ने उसे बताया कि मान सिंह और मोहन सिंह दोनों ने उसके साथ बलात्कार किया है। उसने जिरह में स्वीकार किया है कि गणेशी और खजानी उसके सगे चाचा थे और वे गाँव में थे, लेकिन वे उसकी बहन को पुलिस स्टेशन और अस्पताल नहीं ले गए।

20. यह गवाह घटना का प्रत्यक्षदर्शी नहीं है तथा वह घटना का प्रत्यक्षदर्शी है जो उसे उसकी बहन "के" ने सुनाई थी।

21. अभि.सा.-6 - लाल सिंह, साइट प्लान और पीड़िता के कपड़ों की ज़बती का गवाह है, लेकिन उसने अभियोजन पक्ष के मामले का समर्थन नहीं किया है और अपने बयान से पलट गया है। उसने अपनी मौजूदगी में पीड़िता के कपड़ों की ज़बती से इनकार किया है।

22. अभि.सा.-9 हीरालाल , थाना कुम्हेर में तैनात सहायक उपनिरीक्षक (एएसआई) थे, जिन्होंने मामले की जाँच की और पीड़िता का बयान (प्रत्यक्ष पी.16) दर्ज किया। उन्होंने अपनी जिरह में स्वीकार किया है कि गवाह देशराज और आसमां के बयान दर्ज करने के अलावा , उन्होंने किसी अन्य गवाह का बयान दर्ज नहीं किया था। उन्होंने घटनास्थल से पीड़िता का ' पेटीकोट ' जब्त किया था।

23. प्र.पी.8, पीड़िता के कपड़ों का जब्ती ज़ापन है, जिसे 12.09.1989 को गवाह पी.डब्लू.-9 हीरालाल द्वारा तैयार किया गया था । यह उल्लेखनीय है कि स्थानों को चिह्नित किया गया था और जब्त ' पेटीकोट ' को प्र.पी.15 के तहत विश्लेषण के लिए एफएसएल भेजा गया था। इसके बाद, पी.डब्लू.-7 हरि सिंह ने जब्त सामग्री एफएसएल में जमा कर दी, लेकिन मालखाना अभियोजन पक्ष द्वारा प्रभारी को पेश नहीं किया गया।

24. एफआईआर (प्रत्यक्ष पी5) अभियोक्ता 10 राम सनेही लाल द्वारा 12.09.1989 को दर्ज कराई गई थी। इस गवाह ने अपनी जिरह में स्वीकार किया है कि एफआईआर दर्ज होने के बाद, वह घटनास्थल और अस्पताल नहीं गया और उसे अभियुक्त और शिकायतकर्ता के बीच चल रही समझौते की बातचीत की जानकारी नहीं है।

25. अभि.सा.-11 मुरारीलाल को दिनांक 08.10.1989 को पीड़िता की मृत्यु की सूचना प्राप्त हुई और उसके बाद उन्होंने धारा 174 दण्ड प्रक्रिया संहिता (प्रत्यारोपण 20) के अन्तर्गत कार्यवाही की तथा मृतका के पीएमआर की कार्यवाही भी की। अपनी जिरह में उन्होंने स्वीकार किया है कि अभि.सा.-3 दीन दयाल शर्मा को चौकी प्रभारी के पद पर तैनात किया गया 13.09.1989 को चौबुजा में प्रभारी लेकिन उन्हें उनके द्वारा दर्ज पीड़ित "के" के किसी भी पर्चा बयान के बारे में पता नहीं था।

26. अभियोजन पक्ष की गवाही पूरी होने के बाद, जब अपीलकर्ताओं के बयान धारा 313 दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत दर्ज किए गए , तो उन्होंने घटना में अपनी संलिप्तता से इनकार किया। दोनों ने दलील दी है कि अभियोग-4 आसम के साथ पैसों के विवाद के कारण उन्हें इस मामले में झूठा मुकदमा दर्ज किया गया है।

27. बचाव पक्ष में, अपीलकर्ताओं द्वारा तीन गवाहों से पूछताछ की गई, जिनमें डीडब्ल्यू-1 बनवारी सिंह और डीडब्ल्यू-2 हरि शामिल हैं, जिन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है कि उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन, आसमां के घर से शोरगुल सुनकर , वे उसके घर गए और "के" ने उन्हें बताया कि जब वह दीपक बुझाने की कोशिश कर रही थी, तो उसमें आग लग गई और उसके कपड़े जल गए। दोनों ने आगे कहा कि आसमां और अपीलकर्ताओं के बीच पैसों का विवाद था।

28. डीडब्ल्यू-3 दीन दयाल ने बताया कि 13.09.1989 को वह चौबुजा में प्रभारी के पद पर तैनात थे। चेकपोस्ट पर पीड़िता "के" का पर्चा बयान (एक्स.डी3) दर्ज किया गया जिसमें उसने कहा कि जब वह दीपक बुझा रही थी तब उसके कपड़ों में आग लग गई थी। उन्होंने आगे कहा कि पीड़िता ने जो कुछ भी कहा, वह उन्होंने पर्चा बयान (एक्स.डी3) में दर्ज किया। हालांकि उन्होंने जिरह में स्वीकार किया कि उन्होंने पीड़िता की मानसिक स्थिति या बयान देने की उसकी स्थिति के बारे में अस्पताल में तैनात डॉक्टरों की राय नहीं ली। उन्होंने कहा कि हालांकि पीड़िता का पर्चा बयान दर्ज करने के लिए एएसआई परमानंद को एक अनुरोध एक्स.पी22 भेजा गया था लेकिन वह संबंधित समय पर उपलब्ध नहीं थे, इसलिए यह कार्य उन्हें टेलीफोन पर सौंपा गया और तदनुसार उनके द्वारा बयान दर्ज किए गए।

29. अभियोजन पक्ष की पूरी कहानी मृतक "के" के कई मृत्युपूर्व बयानों के इर्द-गिर्द घूमती है। मृतक के दो मृत्युपूर्व बयान हैं, अर्थात् प्र.पी16, जो 12.09.1989 को और प्र.डी3, जो 13.09.1989 को दर्ज किया गया था। ट्रायल कोर्ट ने मृत्युपूर्व बयान प्र.पी16 पर भरोसा किया है और दूसरे मृत्युपूर्व बयान प्र.डी3 पर केवल इस तकनीकी आधार पर विश्वास नहीं किया है कि यह बयान देने के लिए घायल की चिकित्सीय योग्यता के बारे में इलाज करने वाले डॉक्टर की राय लिए बिना दर्ज किया गया

था। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि यहाँ तक कि, जब पहला बयान (प्र.P16) दर्ज किया गया था, तब भी पीड़िता की शारीरिक/मानसिक स्थिति के बारे में डॉक्टर की ऐसी कोई राय प्राप्त नहीं की गई थी कि क्या वह ऐसा बयान देने के लिए स्वस्थ अवस्था में थी। जिस समय ये दोनों मृत्युपूर्व कथन दर्ज किए गए, उस समय पुलिस अधिकारी द्वारा न तो चिकित्सक से यह प्रमाण पत्र लिया गया कि पीड़ित/घायल बयान देने के लिए चिकित्सकीय रूप से स्वस्थ है, न ही ये बयान किसी न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा या उसकी उपस्थिति में दर्ज किए गए, अतः राजस्थान पुलिस नियम, 1965 के नियम 6.22 के अंतर्गत निहित प्रावधानों का उल्लंघन हुआ।

30. मुन्नु राजा बनाम मध्य प्रदेश राज्य के मामले में **1976 (3) एससीसी 104** में रिपोर्ट की गई , माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा संख्या 11 में विशेष रूप से निम्नानुसार फैसला सुनाया है:

"हालांकि, समापन से पहले हम यह ज़रूर कहना चाहेंगे कि उच्च न्यायालय को तीसरे मृत्युकालिक कथन पर भरोसा नहीं करना चाहिए था। उदाहरण पी-2, जिसके बारे में कहा जाता है कि यह मृतक ने अस्पताल में दिया था। जिस जाँच अधिकारी ने यह बयान दर्ज किया था, उसने निस्संदेह एक डॉक्टर को मौजूद रखने की एहतियात बरती होगी और ऐसा प्रतीत होता है कि बयान दर्ज करते समय मृतक के कुछ दोस्त और रिश्तेदार भी मौजूद थे। लेकिन, अगर जाँच

अधिकारी को लगा कि बहादुर सिंह की हालत नाज़ुक है, तो उन्हें मृत्युकालिक कथन दर्ज करने के लिए एक मजिस्ट्रेट की सेवाएँ लेनी चाहिए थीं। जाँच अधिकारी स्वाभाविक रूप से जाँच की सफलता में रुचि रखते हैं और जाँच के दौरान जाँच अधिकारी द्वारा स्वयं मृत्युकालिक कथन दर्ज करने की प्रथा को प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए। इसलिए हमने अस्पताल में दर्ज मृत्युकालिक कथन, उदाहरण पी-2, को अपने विचार से बाहर रखा है।"

31. उपरोक्त विचार इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा बशीर शाह बनाम राजस्थान राज्य के मामले में अपनाया गया था, जो **1994** एससीसी ऑनलाइन (राजस्थान) **173** में रिपोर्ट किया गया था और इसे पैरा 25 और 26 में निम्नानुसार खारिज कर दिया गया था:

“25. माननीय सर्वोच्च न्यायालय की उपरोक्त टिप्पणियाँ उपरोक्त निर्णय का प्रतिरूप हैं, जो भारतीय संविधान के अनुच्छेद 141 के अंतर्गत भारत के सभी न्यायालयों के लिए बाध्यकारी हैं। वर्तमान मामले में, यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय ने यह माना था कि जाँच अधिकारी स्वाभाविक रूप से जाँच की सफलता में रुचि रखते हैं और जाँच के दौरान जाँच अधिकारी द्वारा स्वयं मृत्युपूर्व कथन दर्ज करने की प्रथा को प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए, किन्तु विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश ने अपने निर्णय में वर्तमान अपीलकर्ताओं के विरुद्ध दोषसिद्धि दर्ज की और कहा कि अभियोग-11 मणिकांत हेड-कांस्टेबल एक पुलिसकर्मी है और यह नहीं माना जाना चाहिए कि उसकी वर्तमान अपीलकर्ताओं से कोई दुश्मनी है,

इसलिए वह एक स्वतंत्र गवाह है और उसकी गवाही को बिना किसी पूर्वाग्रह और द्वेष के एक स्वतंत्र गवाह के रूप में माना जाना चाहिए। वास्तव में, विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश द्वारा दोषसिद्धि और सजा दर्ज करने का निर्णय, जिस पर हमारे समक्ष प्रश्न उठाया जा रहा है, यदि मान्य माना जाए, तो यह जाँच अधिकारियों द्वारा मृत्युपूर्व कथन दर्ज करने को प्रोत्साहित करेगा। हमारे समक्ष उद्धृत निर्णय से हमारे अपने उच्च न्यायालय में, हमने तथ्यतः पाया कि जाँच अधिकारियों ने हमेशा मृत्यु पूर्व कथन दर्ज किए थे, जिसके आधार पर विद्वान सत्र न्यायाधीशों ने निर्णय पारित किए और इस न्यायालय में चुनौती दिए जाने के बाद, ऐसे सभी मृत्यु पूर्व कथनों की इस न्यायालय में कड़ी जाँच की गई और विश्लेषणात्मक चर्चा के बाद, केवल जाँच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए मृत्यु पूर्व कथन के आधार पर दोषसिद्धि को दो मामलों को छोड़कर लगभग सभी मामलों में रद्द कर दिया गया। इस न्यायालय के कई ऐसे निर्णय हैं जो प्रकाशित और अप्रकाशित हैं, जहाँ जाँच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए ऐसे मृत्यु पूर्व कथनों की सत्यता इस न्यायालय के संज्ञान में लाई गई है ताकि जाँच अधिकारी द्वारा मृत्यु पूर्व कथन दर्ज करने की इस प्रथा की राजस्थान पुलिस नियम, 1965 (संक्षेप में '1965 के नियम') के अध्याय VI के नियम 6.22 के अंतर्गत परिकल्पित अनिवार्य प्रावधानों के विरुद्ध जाँच की जा सके। हम विश्वसनीयता का परीक्षण तैयार कर रहे हैं, जो जाँच अधिकारियों और अधीनस्थ न्यायालयों को इस प्रकार के विवादों से निपटने में मार्गदर्शन प्रदान करेगा, जो अक्सर जाँच अधिकारियों द्वारा दर्ज किए गए मृत्यु पूर्व कथनों के

संबंध में उठते हैं कि मृत्यु पूर्व कथन को दोषसिद्धि का एकमात्र आधार कब और कैसे बनाया जा सकता है। बिना पुष्टि के सजा और दंड का निर्धारण कैसे किया जाना चाहिए और इसे मजिस्ट्रेट, डॉक्टर या जाँच अधिकारी द्वारा कब और कैसे दर्ज किया जाना चाहिए। हमारी विनम्र राय में, न्यायालयों द्वारा मृत्यु पूर्व दिए गए कथन की विश्वसनीयता का परीक्षण निम्नलिखित होना चाहिए:

ए. सामान्यतः, जब भी कोई घायल व्यक्ति गंभीर स्थिति में हो, तो जाँच अधिकारी को मृत्युपूर्व कथन दर्ज करने के लिए मजिस्ट्रेट की सेवाएँ लेनी चाहिए। वास्तव में, जाँच अधिकारी स्वाभाविक रूप से जाँच की सफलता में रुचि रखते हैं और जाँच के दौरान स्वयं जाँच अधिकारी द्वारा मृत्युपूर्व कथन दर्ज करने की प्रथा को प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए।

एआईआर 1976 एससी 2199: (1976 सीआरआई एलजे 1718): (1976) 3 एससीसी 104.

बी. न तो कानून का नियम है और न ही कोई विवेक है कि मृत्युपूर्व दिए गए बयान पर पुष्टि के बिना कार्रवाई नहीं की जा सकती।

एआईआर 1976 एससी 2199: (1976 सीआरआई एलजे 1718): (1976) 3 एससीसी 104.

सी. यदि न्यायालय इस बात से संतुष्ट है कि मृत्युपूर्व दिया गया कथन सत्य और स्वैच्छिक है

तो वह बिना किसी पुष्टि के इसके आधार पर दोषसिद्धि का निर्णय दे सकता है।

(वी.एस. मौर बनाम महाराष्ट्र राज्य, 1978 (1) एससीसी 622: एआईआर 1978 एससी 519: 1978 क्रि एलजे 644)।

डी. इस प्रयोजन के लिए, न्यायालय को कठोरतम जाँच करनी होगी और यह सुनिश्चित करने के लिए सतर्क रहना होगा कि घोषणा किसी शिक्षा, प्रेरणा या कल्पना का परिणाम न हो और मृतक को हमलावरों को देखने और पहचानने का अवसर मिला हो तथा वह घोषणा करने के लिए मानसिक रूप से स्वस्थ हो। एआईआर 1976 एससी 2194 (एसआईसी)।

ई. जहां मृत्युपूर्व दिया गया कथन संदिग्ध हो, वहां पुष्टिकारक साक्ष्य के बिना उस पर कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए।

1974 (4) एस.सी.सी. 264: ए.आई.आर. 1974 एस.सी. 332: 1974 सी.आर.आई. एल.जे. 361।

एफ. किसी आपराधिक मामले में, हत्या के मामले को तो छोड़ ही दीजिए , जाँच इस तरह से की जानी चाहिए कि निष्पक्ष जाँच पर कोई संदेह न रहे। निष्पक्ष जाँच एक मूलभूत सिद्धांत है जो मृत्यु पूर्व दिए गए बयान की विश्वसनीयता को बढ़ा सकता है और अगर अदालत इसकी निष्पक्षता से संतुष्ट नहीं

है तो इसकी विश्वसनीयता को कम भी कर सकता है।

जी. मृत्युपूर्व कथन के मामले में सत्यता के बारे में संदेह को कभी भी साक्ष्य के रूप में प्रतिस्थापित नहीं किया जाना चाहिए, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि मृतक द्वारा अपने स्वास्थ्य की अनिश्चित स्थिति में दिया गया बयान, अभियुक्त-अपीलकर्ताओं की अनुपस्थिति में दिया गया है, जिन्हें कानूनी शब्दावली में "जिरह द्वारा मृत्युपूर्व कथन" कहे जाने वाले कथन की सत्यता का परीक्षण करने का कोई अवसर नहीं मिला था।

एच. मृत्युपूर्व बयान देते समय, जो कि न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि और सजा का एकमात्र आधार है, यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि अभियोजन पक्ष की कहानी न केवल सत्य हो सकती है, बल्कि सत्य होनी ही चाहिए, तथा सत्य हो सकती है और सत्य होनी ही चाहिए के बीच एक बड़ा अंतर है, जिसे अभियोजन पक्ष को निर्विवाद और विश्वसनीय साक्ष्य प्रस्तुत करके पूरा करना होगा।

आई. राजस्थान पुलिस नियम, 1965, एफआईआर दर्ज करने और उसके बाद की जाँच की प्रक्रिया को विस्तार से निर्धारित करते हैं। इन नियमों के अंतर्गत, 1965 के नियम का अध्याय V, एफआईआर दर्ज करने का निर्देश देता है। अध्याय VI, जाँच से संबंधित है। अध्याय VII, गिरफ्तारी,

भागने और हिरासत से संबंधित है। अध्याय VIII, अभियोजन और न्यायालय के कर्तव्यों से संबंधित है। इसी प्रकार, 1965 के नियमों के अध्याय VI में मृत्युपूर्व कथन को किस प्रकार दर्ज किया जाना है, इसकी पूरी प्रक्रिया दी गई है। मृत्युपूर्व कथन से संबंधित प्रासंगिक नियम, 1965 के नियम के अध्याय VI में दिए गए हैं, जिन्हें नीचे पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है:

नियम 6.22 मृत्यु पूर्व घोषणा :

- (1) मृत्युपूर्व कथन, जब भी संभव हो, मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया जाएगा।
- (2) यदि संभव हो तो घोषणा करने वाले व्यक्ति की चिकित्सा अधिकारी द्वारा जांच की जाएगी ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि उसके पास स्पष्ट कथन करने के लिए पर्याप्त कारण है।
- (3) यदि कोई मजिस्ट्रेट उपलब्ध न हो तो, जब राजपत्रित पुलिस अधिकारी उपस्थित न हो तो, घोषणा पुलिस विभाग और मामले से संबंधित पक्षों से असंबद्ध दो या अधिक विश्वसनीय गवाहों की उपस्थिति में दर्ज की जाएगी।
- (4) यदि घायल व्यक्ति के बयान दर्ज किए जाने से पहले उसकी मृत्यु हो जाने के जोखिम के बिना ऐसा कोई गवाह प्राप्त नहीं किया जा सकता है, तो बयान दो या

अधिक पुलिस अधिकारियों की उपस्थिति में दर्ज किया जाएगा।

(5) पुलिस अधिकारी को दिए गए मृत्युपूर्व कथन पर, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के अधीन, कथन करने वाले व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षर किए जाने चाहिए।

26. हमने उपरोक्त नियम 1965 पर गहन विचार-विमर्श किया है और हम पूर्णतः संतुष्ट हैं कि ये नियम स्वतःपूर्ण प्रक्रिया हैं, जिनका पालन सभी जाँच अधिकारियों को मृत्युपूर्व कथन दर्ज करते समय करना होगा। हमारी विनम्र राय में, ये नियम न्यायसंगत, निष्पक्ष और युक्तिसंगत हैं, इसलिए, जहाँ भी मृत्युपूर्व कथन को दोषसिद्धि और दण्ड का एकमात्र आधार माना जाता है, वहाँ इनका अक्षरशः और मूल भावना से कड़ाई से अनुपालन सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

32. कानून की यह स्थापित स्थिति है कि जब भी कई मृत्युकालिक घोषणाएँ हों, तो प्रत्येक मृत्युकालिक घोषणा पर उसके गुण-दोष और साक्ष्य-मूल्य के आधार पर स्वतंत्र रूप से विचार किया जाना चाहिए और किसी एक को दूसरे में किसी विशेष भिन्नता के कारण अस्वीकार नहीं किया जा सकता। न्यायालय को प्रत्येक पर सही परिप्रेक्ष्य में विचार करना चाहिए और स्वयं संतुष्ट होना चाहिए कि उनमें से कौन-सी घोषणा वास्तविक स्थिति को दर्शाती है। प्रत्येक मृत्युकालिक घोषणा का उसके गुण-दोष के आधार पर अलग-अलग मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

33. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भद्रगिरि वेंकट रवि बनाम लोक अभियोजक, उच्च न्यायालय, आंध्र प्रदेश मामले में **2013 (14) एससीसी 145** में, एक ऐसे मामले पर विचार करते हुए, जिसमें तीन मृत्युपूर्व कथन थे और प्रत्येक कथन अभियोजन पक्ष की कहानी का एक अलग संस्करण प्रस्तुत कर रहा था, यह निर्णय दिया कि ऐसे साक्ष्यों के आधार पर अपीलकर्ताओं को दोषसिद्धि देना असुरक्षित था। पैरा 22 से 24 में निम्नलिखित निर्णय दिया गया:

"22. यह एक स्थापित कानूनी प्रस्ताव है कि यदि दो मृत्युपूर्व कथनों में स्पष्ट विसंगतियाँ हों, तो अभियुक्त को दोषी ठहराना असुरक्षित होगा। ऐसी तथ्यात्मक स्थिति में, अभियुक्त को संदेह का लाभ मिलता है। (देखें: संजय बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2007) 9 एससीसी 148; और हीरालाल बनाम मध्य प्रदेश राज्य, (2009) 12 एससीसी 671)

23. बहुल/एकाधिक मृत्युकालिक कथनों के मामले में, न्यायालय को साक्ष्यों की सावधानीपूर्वक जाँच करनी चाहिए और यह पता लगाना चाहिए कि क्या उनमें, विशेष रूप से महत्वपूर्ण विवरणों में, एकरूपता है। यदि किसी एक मृत्युकालिक कथन के समर्थन में दिए गए गवाहों के बयानों में परस्पर विसंगतियाँ हैं, तो उस पर भरोसा करना सुरक्षित नहीं होगा। वास्तव में, मृत्युकालिक कथनों की बहुलता नहीं, बल्कि उनकी विश्वसनीयता ही उन्हें विश्वसनीय बनाती है। अभियोजन पक्ष के मामले में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएँ। यदि मृत्यु पूर्व कथन स्वैच्छिक, विश्वसनीय और स्वस्थ

मानसिक स्थिति में दिया गया पाया जाता है, तो उस पर बिना किसी पुष्टिकरण के भरोसा किया जा सकता है। लेकिन बयानों में एकरूपता होनी चाहिए।

24. विसंगतियों की स्थिति में, न्यायालय को उनकी प्रकृति की जाँच करनी होगी, अर्थात् वे महत्वपूर्ण हैं या नहीं और विभिन्न मृत्युपूर्व कथनों की विषय-वस्तु की जाँच करते समय, न्यायालय को विभिन्न तथ्यों और परिस्थितियों के आलोक में उनकी जाँच करनी होगी। मृत्युपूर्व कथन के मामले में, चूँकि अभियुक्त को कथनकर्ता से जिरह करने का अधिकार नहीं है और वह अन्य गवाहों की तरह सच्चाई उगलवाने में सक्षम नहीं है, इसलिए यदि कथन न्यायालय को उसकी सत्यता के बारे में पूर्ण विश्वास नहीं दिलाता है, तो उस पर भरोसा करना सुरक्षित नहीं होगा, क्योंकि यह किसी के द्वारा सिखाए जाने, उकसाने या कल्पना की उपज हो सकती है। न्यायालय को यह विश्वास दिलाना होगा कि कथनकर्ता मानसिक रूप से स्वस्थ था और उसे हमलावर/हमलावरों को देखने और पहचानने का स्पष्ट अवसर मिला था।

(देखें: श्रीमती कमला बनाम पंजाब राज्य, एआईआर 1993 एससी 374; किशन लाल बनाम राजस्थान राज्य, एआईआर 1999 एससी 3062; लेला श्रीनिवास राव बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, एआईआर 2004 एससी 1720; अमोल सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य, (2008) 5 एससीसी 468; आंध्र प्रदेश राज्य बनाम पी. खाजा हुसैन, (2009) 15 एससीसी 120;

और शारदा बनाम राजस्थान राज्य, एआईआर 2010 एससी 408)।

34. निस्संदेह, पीड़िता का पुलिस बयान (प्रत्यक्ष पी16) 12.09.1989 को दर्ज किया गया था, जिसमें पीड़िता ने आरोप लगाया था कि अपीलकर्ताओं ने 8-9 सितंबर, 1989 की मध्यरात्रि में उसके साथ दो बार बलात्कार किया और फिर उसने अपने शरीर पर मिट्टी का तेल डालकर आग लगा ली। यह तथ्य निर्विवाद है कि अगले ही दिन उसका दूसरा पर्चा बयान (प्रत्यक्ष डी3) दर्ज किया गया था, जिसमें उसने किसी पर कोई आरोप नहीं लगाया था और स्पष्ट रूप से कहा था कि यह एक आकस्मिक आग थी और दीपक बुझाते समय उसे आग लग गई और उसके कपड़ों में आग लग गई। ये दोनों मृत्यु पूर्व कथन एक-दूसरे के विपरीत हैं।

35. अभियोजन पक्ष के मामले के अनुसार, बलात्कार और आग की घटना 8 और 9 सितंबर, 1989 की मध्य रात्रि को लगभग 9 बजे हुई थी जब अभियोक्ता "के" अपने घर पर अकेली थी और उसका भाई पीडब्लू-3 देश राज अगले कमरे में सो रहा था। अभियोक्ता (पीडब्लू-4) के पिता आसम को घटना की जानकारी उसके गांव के किसी ग्रामीण द्वारा 10.09.1989 को भेजे गए पत्र के माध्यम से मिली। इसके बाद, उन्होंने 12.09.1989 को सुबह 8.45 बजे एफआईआर (एक्स.पी6) दर्ज कराई। एफआईआर के अनुसार, वह 10 सितंबर को गांव आए और

उनकी बेटी ने उन्हें 10 सितंबर को ही पूरी घटना बताई, फिर भी वह दो दिनों तक चुप रहे और उन्होंने अपनी बेटी को इलाज के लिए अस्पताल ले जाने की जहमत नहीं उठाई और उन्होंने दो दिनों तक एफआईआर दर्ज नहीं की।

36. यहाँ यह उल्लेखनीय है कि मेडिकल ज्यूरिस्ट पी.डब्ल्यू.-2 डॉ. अजय कपूर के कथनों के अनुसार, मृतका 75% से अधिक जली हुई थी। घायल की ऐसी स्थिति में भी, उसके पिता उसे उपचार के लिए अस्पताल नहीं ले गए। अभियोजन पक्ष 09.09.1989 से 12.09.1989 तक घायल को अस्पताल में भर्ती न कराने का कोई उचित स्पष्टीकरण देने में विफल रहा है।

37. अभिलेख से पता चलता है कि घायल "के" की चिकित्सीय जांच दिनांक 12.09.1989 को लगभग 8.00 बजे, अर्थात् घटना के चार दिन बाद, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, कुम्हेर में की गई थी। चिकित्सा अधिकारी (पीडब्ल्यू-1) डॉ. बनय सिंह ने घायल के शरीर पर जलने के 11 निशान पाए और ये चोटें 48 घंटों के भीतर की थीं। उसके गाल, छाती, जांघों और शरीर के अन्य हिस्सों पर खरोंच या खरोंच का कोई निशान नहीं पाया गया।

38. यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि यदि चोटों की अवधि के 48 घंटे 12.09.1989 को शाम 8 बजे से गिने जाएं, तो घायल को ये जलने की

चोटें 10.09.1989 को लगी होंगी, जबकि कथित घटना 8 और 9 सितंबर, 1989 की मध्य रात्रि में हुई थी। यहां यह उल्लेख करना उचित है कि अभियोजन पक्ष के मामले के अनुसार, घटना 8 और 9 सितंबर, 1989 की मध्य रात्रि में लगभग 9 बजे हुई थी, जिसका अर्थ है कि यदि घटना 8 सितंबर, 1989 को रात में लगभग 9 बजे हुई थी, तो जलने की चोटों की अवधि 12.09.1989 को 48 घंटे के भीतर कैसे पाई गई, जब डॉक्टर ने घायल की जांच रात में लगभग 8 बजे की थी। एक पुरुष / महिला झूठ बोल सकती है लेकिन परिस्थितियां कभी झूठ नहीं बोलतीं। इस मामले में, अभियोजन पक्ष यह स्पष्ट नहीं कर पाया है कि जब 12.09.1989 को रात 9 बजे जलने की अवधि 48 घंटों के भीतर थी, तो घायल "के" को 08.09.1989 को रात 9 बजे जलने की चोटें कैसे लगीं। इस विसंगति को समझना मुश्किल है। ये परिस्थितियाँ अभियोजन पक्ष की कहानी के खोखलेपन को दर्शाती हैं। ऐसी स्थिति अभियोजन पक्ष की कहानी पर गंभीर संदेह पैदा करती है।

39. जब स्त्री रोग विशेषज्ञ पी.डब्ल्यू.-8 डॉ. अशोक कुमार वर्मा ने 12.09.1989 को पीड़ित की जाँच की, तो उसकी योनिच्छद (हाइमन) पुरानी और फटी हुई पाई गई और वह पूरी तरह से क्षतिग्रस्त पाई गई। यौन उत्पीड़न के संबंध में कोई राय नहीं दी गई। रासायनिक परीक्षण रिपोर्ट प्राप्त होने तक संभोग के संबंध में अंतिम राय सुरक्षित रखी गई।

40. यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि कोई भी रासायनिक परीक्षण रिपोर्ट अभिलेख पर उपलब्ध नहीं है जो यह साबित कर सके कि कोई यौन संबंध हुआ था या नहीं। संपूर्ण अभिलेख से पता चलता है कि जाँच अधिकारी ने घायल के कपड़े और योनि से लिया गया स्वेब एफएसएल को भेजा है। घायल की एमएलआर (एक्स.पी1) में इस तथ्य का उल्लेख किया गया है कि वीर्य के किसी भी साक्ष्य के लिए रासायनिक परीक्षण हेतु एक स्लाइड भेजी गई थी, लेकिन अभिलेख पर कोई एफएसएल रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है। अतः, इन परिस्थितियों में, अपीलकर्ताओं के विरुद्ध अभियोजन पक्ष के मामले को उचित संदेह से परे साबित करने के लिए यौन संबंध से संबंधित कोई भी संबद्ध और पुष्टिकारी साक्ष्य अभिलेख पर उपलब्ध नहीं है।

41. घायल के पिता अर्थात पीडब्लू-4 आसम को 10.09.1989 को एक ग्रामीण द्वारा दिल्ली में दिए गए पत्र के माध्यम से सूचना प्राप्त हुई। लेकिन न तो उस पत्र को रिकॉर्ड पर लाया गया है और न ही उस ग्रामीण को गवाह के कठघरे में पेश किया गया है। घायल के पिता को उक्त ग्रामीण के नाम के बारे में जानकारी नहीं है। 10.09.1989 को बलात्कार और आग की सूचना मिलने के बावजूद , पीडब्लू-4 आसम दो दिनों तक चुप रहा और उसने अपनी घायल, जली हुई, बलात्कार की शिकार बेटी को इलाज के लिए अस्पताल ले जाने और पुलिस में इस

जघन्य घटना की रिपोर्ट दर्ज कराने की जहमत नहीं उठाई। घायल/जली हुई/बलात्कार की बेटी को अस्पताल न ले जाना और दो दिनों से अधिक समय तक पुलिस में रिपोर्ट दर्ज न कराना अभियोजन पक्ष की कहानी की सत्यता पर गंभीर संदेह पैदा करता है।

42. एफआईआर (एक्स.पी6) के अनुसार अभियोक्ता को 11.09.1989 को अस्पताल में भर्ती कराया गया था, जबकि ऐसा कोई प्रवेश/डिस्चार्ज टिकट रिकॉर्ड पर उपलब्ध नहीं है, जिससे यह साबित हो सके कि घायल "के" को 11.09.1989 को भर्ती कराया गया था, जबकि एमएलआर (एक्स.पी1) इंगित करता है कि इसे 12.09.1989 को शाम 8 बजे तैयार किया गया था और पीएमआर एक्स.पी4 के अनुसार, उसे 13.09.1989 को शाम 7.25 बजे अस्पताल में भर्ती कराया गया था।

43. प्राथमिकी (प्रत्यक्ष पी6) आगे इंगित करती है कि अपीलकर्ता मोहन सिंह को घटना के तुरंत बाद उसी दिन ग्रामीणों ने पकड़ लिया था। यदि ऐसा था, तो घटना की कोई सूचना पुलिस को क्यों नहीं दी गई और अपीलकर्ता मोहन सिंह को पुलिस को क्यों नहीं सौंपा गया? अभिलेख में ऐसा कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है। जबकि अभिलेख इंगित करता है कि अपीलकर्ताओं को प्रत्यक्ष पी17 और पी18 के तहत 15.11.1989 को, अर्थात् घटना के दो महीने बाद, गिरफ्तार किया गया

था। अतः, इन परिस्थितियों में भी, अभियोजन पक्ष की कहानी संदिग्ध प्रतीत होती है।

44. वर्तमान मामले में साक्ष्यों पर विचार करते हुए, यह पाया गया है कि अभियोजन पक्ष का मामला, अपीलकर्ताओं द्वारा कथित रूप से किए गए अपराध के लिए उनकी दोषसिद्धि को बनाए रखने के लिए स्वाभाविक, सुसंगत और संभावित नहीं है। विचारण न्यायालय को एफआईआर दर्ज करने में देरी, घायलों को अस्पताल में भर्ती करने में देरी, घायलों को लगी आग की चोटों की अवधि, अभियोक्ता के साथ यौन संबंध के संबंध में एफएसएल रिपोर्ट के पुष्टिकारक साक्ष्य की अनुपस्थिति के संबंध में रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य का मूल्यांकन करना चाहिए था । उन ग्रामीणों को पेश न करना जिन्होंने अभियुक्त मोहन सिंह को मौके पर पकड़ा था और शिकायतकर्ता पीडब्लू-4 आसम को घटना के बारे में सूचित किया था, और पीड़िता के पिता का अप्राकृतिक आचरण, जिसमें उन्होंने अपनी घायल/जली हुई/बलात्कार की शिकार बेटी को काफी समय तक घर पर रखा और 12.09.1989 तक पुलिस में मामला दर्ज नहीं कराया, ने पूरे अभियोजन मामले पर उचित संदेह पैदा किया है। अभियोजन पक्ष द्वारा बनाई गई कहानी किसी भी विश्वास को प्रेरित नहीं करती है।

45. विचारणीय अगला प्रश्न यह है कि क्या अपीलकर्ताओं के विरुद्ध धारा 306 के अंतर्गत अपराध का आरोप लगाया जा सकता है। अभियोजन पक्ष का पूरा मामला यह है कि अपीलकर्ताओं ने "के" के साथ बलात्कार किया, जिसके परिणामस्वरूप उसने आत्महत्या कर ली और इसलिए, क्या अपीलकर्ता धारा 306 के अंतर्गत अपराध के दोषी हैं। चूँकि इस न्यायालय ने माना है कि अभियोजन पक्ष अपीलकर्ताओं द्वारा किए गए बलात्कार के अपराध को अभिलेखों में स्थापित करने में बुरी तरह विफल रहा है, इसलिए अपीलकर्ताओं को धारा 306 के अंतर्गत भी दोषसिद्धि प्राप्त होगी।

46. इसी तरह के मुद्दे से निपटते हुए कि क्या किसी आरोपी को धारा 306 आईपीसी के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया जा सकता है जब अभियोजन पक्ष धारा 376 आईपीसी के तहत ऐसे आरोपी के खिलाफ आरोप साबित करने में विफल रहा है, दिल्ली उच्च न्यायालय ने 2017 एससीसी ऑनलाइन डेल **8600** में रिपोर्ट किए गए राम स्वरूप बनाम दिल्ली राज्य के मामले में फैसले के पैरा 5 में कहा है जो इस प्रकार है:

“5. वर्तमान अपील में उठाए गए दो मुद्दे यानी कि क्या बलात्कार के अपराध को आत्महत्या के लिए उकसाना माना जाएगा और क्या मृतक की मृत्यु पूर्व घोषणा साक्ष्य में स्वीकार्य थी और धारा 376 आईपीसी के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि का आधार बनाने के लिए पर्याप्त

थी, इस न्यायालय के समक्ष सैंडी @ वेद प्रकाश (सुप्रा) में विचार के लिए आए थे, जिसमें इस न्यायालय ने पहले मुद्दे पर कहा था: -

"31. इस प्रकार, हम सबसे पहले इस बात पर विचार करते हैं कि क्या अपराधियों (जिसने भी बलात्कार किया हो) को मृतका को आत्महत्या के लिए उकसाने का दोषी ठहराया जा सकता है। इस पहलू पर चर्चा करते समय हम यह मानकर आगे बढ़ेंगे कि मृतका ने बताया था कि उसके साथ अपीलकर्ताओं ने बलात्कार किया था और शर्म के कारण उसने अपनी जान देने का फैसला किया। हमारा यह मतलब नहीं निकाला जाना चाहिए कि हमने इस स्तर पर अपीलकर्ताओं के खिलाफ यह निष्कर्ष निकाला है कि उन्होंने मृतका के साथ बलात्कार किया था। हम अपने निर्णय के अगले चरण में इस पहलू पर चर्चा करेंगे जब हम साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 32(1) की रूपरेखा और रिकॉर्ड पर लाए गए साक्ष्य पर चर्चा करेंगे।

32. भारतीय दंड संहिता में "आत्महत्या" शब्द को कहीं भी परिभाषित नहीं किया गया है , फिर भी इसका अर्थ और आशय सर्वविदित है और इसकी व्याख्या की आवश्यकता नहीं है। "सुई" का अर्थ है "स्वयं" और " साइड " का अर्थ है "हत्या", इस प्रकार यह आत्म-हत्या का कृत्य है । संक्षेप में, आत्महत्या करने वाले व्यक्ति को स्वयं ही

आत्महत्या करनी चाहिए, चाहे उसने आत्महत्या के अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए किसी भी साधन का प्रयोग किया हो।

33. आत्महत्या अपने आप में अंग्रेजी या भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत कोई अपराध नहीं है, हालाँकि एक समय इंग्लैंड में यह एक घोर अपराध था। इंग्लैंड में, पूर्व कानून लोगों के लिए निवारक प्रकृति का था क्योंकि इसमें दो प्रकार के दंड का प्रावधान था:

(i) मृतक के शव को उसकी छाती में खूँटा ठोककर राजमार्ग पर दफना देना; (ii) राज्य द्वारा मृतक की संपत्ति जब्त कर लेना। वर्तमान में, अंग्रेजी कानून के तहत आत्महत्या के लिए कोई सजा नहीं है।

34. भारत में आत्महत्या अपने आप में कोई अपराध नहीं है, क्योंकि सफल अपराधी कानून की पहुंच से बाहर है, तथापि आत्महत्या का प्रयास भारतीय दंड संहिता की धारा 309 के अंतर्गत दंडनीय अपराध है।

35. आत्महत्या के लिए उकसाने का अपराध भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के तहत दंडनीय है, जो इस प्रकार है:

"यदि कोई व्यक्ति आत्महत्या करता है, तो जो कोई भी ऐसी आत्महत्या के लिए

उकसाता है, उसे किसी एक अवधि के लिए कारावास से दंडित किया जाएगा, जिसे दस वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है, और जुर्माना के लिए भी उत्तरदायी होगा।"

36. धारा 306 "दुष्प्रेरण" शब्द को परिभाषित नहीं करती है और न ही संहिता के अध्याय 2 में, जो सामान्य व्याख्याओं से संबंधित है, इस शब्द को परिभाषित किया गया है। हालाँकि, संहिता का अध्याय 5 दुष्प्रेरण के संबंध में प्रावधान करता है। इस अध्याय की धारा 107 "दुष्प्रेरण" को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित करती है:

"कोई व्यक्ति किसी कार्य को करने के लिए उकसाता है, जो—

प्रथम--किसी व्यक्ति को उस कार्य को करने के लिए उकसाता है; या द्वितीय--उस कार्य को करने के लिए किसी षडयंत्र में एक या एक से अधिक अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों के साथ शामिल होता है, यदि उस षडयंत्र के अनुसरण में और उस कार्य को करने के लिए कोई कार्य या अवैध लोप होता है; या तृतीय--उस कार्य को करने में किसी कार्य या अवैध लोप द्वारा जानबूझकर सहायता करता है।

स्पष्टीकरण 1--कोई व्यक्ति, जो जानबूझकर दुर्य्यपदेशन द्वारा, या किसी ऐसे तात्त्विक तथ्य को, जिसे प्रकट करने के लिए वह आबद्ध है, जानबूझकर छिपाकर, किसी कार्य को स्वेच्छा

से करवाता है या करवाता है, या करवाने या करवाने का प्रयत्न करता है, उस कार्य को करने के लिए उकसाता है।

स्पष्टीकरण 2--जो कोई, किसी कार्य के किए जाने से पूर्व या किए जाने के समय, उस कार्य के किए जाने को सुगम बनाने के लिए कोई कार्य करता है, और तद्द्वारा उसके किए जाने को सुगम बनाता है, उस कार्य के किए जाने में सहायता करता है, कहा जाता है।

37. अभियोजन पक्ष के अनुसार, मृतका के साथ खेतों में बलात्कार किया गया था। वह घर लौटी और उसने ज़हर खाने का फैसला किया क्योंकि उसे लगा कि उसके साथ हुए अपमान ने उसके चेहरे पर कलंक लगा दिया है और समाज में दिखाने के लिए उसके पास कोई चेहरा नहीं बचा है। इस निराशा, हताशा, अपमान और कुंठा की भावना से ग्रस्त होकर उसने अपनी नवजात बेटी को सल्फास की गोली खिला दी और खुद भी सल्फास की गोलियां खा लीं। बलात्कारियों पर मृतका के साथ मिलकर सल्फास खाने की साजिश रचने का आरोप नहीं लगाया गया है। बलात्कारियों पर किसी भी साजिश या अवैध चूक का आरोप नहीं लगाया गया है। बलात्कारियों पर मृतका को सल्फास खाने में मदद करने का आरोप नहीं लगाया गया है, और न ही जानबूझकर मदद करने का। इस प्रकार, भारतीय दंड

संहिता की धारा 107 की दूसरी और तीसरी धाराएँ लागू नहीं होतीं। प्रश्न यह होगा कि क्या पहली धारा लागू होती है, अर्थात् क्या यह कहा जा सकता है कि बलात्कारियों ने अपने बलात्कार के कृत्य से मृतका को सल्फास खाने के लिए उकसाया था।

38. मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय और आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने बिल्कुल विपरीत विचार व्यक्त किए हैं। मोहम्मद हफीज बनाम मध्य प्रदेश राज्य, एम ए एन यू/एम पी/0238/2009 और कोक्किलिगड्डा वीरास्वामी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, 2005 क्रि एल.जे. 869 के निर्णयों में यह माना गया है कि यदि अभियुक्त के अपमानजनक कृत्य और लड़की द्वारा आत्महत्या करने के बीच निकट और जीवन्त संबंध है तो अभियुक्त द्वारा लड़की के साथ बलात्कार करके उसे आत्महत्या के लिए उकसाया जाता है। इसी न्यायालय के दो न्यायाधीशों ने बट्टुला कोनाडुलु बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, एम ए एन यू/एपी/0833/2006 और दीपक बनाम मध्य प्रदेश राज्य, 1994 क्रि एल.जे. 767 के निर्णयों में विपरीत विचार व्यक्त किए हैं जहां उपरोक्त प्रश्न का उत्तर नकारात्मक में दिया गया था।

39. भारतीय दंड संहिता की धारा 107 में प्रयुक्त शब्द "उकसाना" का क्या अर्थ है?

40. उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर चित्रेश कुमार चोपड़ा बनाम राज्य, (2009) 11 स्केल 24 के निर्णय में

सर्वोच्च न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों में पाया जा सकता है:

इस प्रकार, "उकसाने" के लिए, किसी व्यक्ति को किसी दूसरे को उकसाने के लिए "उकसाने" या "आगे बढ़ने के लिए प्रेरित" करके उकसाना, उकसाना, आग्रह करना या किसी कार्य को करने के लिए प्रोत्साहित करना होता है। "उकसाने" शब्द का शब्दकोशीय अर्थ है "किसी को कार्य करने के लिए उकसाने वाली चीज़: कार्य या प्रतिक्रिया के लिए उकसाना" (देखें संक्षिप्त ऑक्सफ़ोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी); "किसी को तब तक परेशान या परेशान करते रहना जब तक वह प्रतिक्रिया न दे" (देखें: ऑक्सफ़ोर्ड एडवांस्ड लर्नर्स डिक्शनरी--7 वां संस्करण)। इसी प्रकार, "उकसाने" का अर्थ है किसी को कुछ करने के लिए सलाह देना या मनाने की पूरी कोशिश करना या किसी व्यक्ति को तेज़ी से और/या किसी खास दिशा में, खासकर उस व्यक्ति को धक्का देकर या मजबूर करके, आगे बढ़ने के लिए मजबूर करना। इसलिए, किसी व्यक्ति को उकसाने के लिए उसे उकसाने, उकसाने या किसी कार्य को करने के लिए प्रोत्साहित करने के इरादे से उसे "उकसाने" या "आगे बढ़ने के लिए प्रेरित" करना होता है। जैसा कि रमेश कुमार के मामले (सुप्रा) में देखा गया है ,

जहां अभियुक्त अपने कृत्यों या आचरण के निरंतर क्रम से ऐसी परिस्थितियां पैदा करता है कि मृतक के पास आत्महत्या करने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं बचा था, वहां "उकसाने" का अनुमान लगाया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, यह साबित करने के लिए कि अभियुक्त ने किसी व्यक्ति को आत्महत्या के लिए उकसाया, यह स्थापित करना होगा कि:

(i) अभियुक्त मृतक को शब्दों, कार्यों या जानबूझकर की गई चूक या आचरण से परेशान या खीझता रहा, जो जानबूझकर की गई चुप्पी भी हो सकती है, जब तक कि मृतक ने प्रतिक्रिया नहीं की या अपने कार्यों, शब्दों या जानबूझकर की गई चूक या आचरण से मृतक को आगे की दिशा में तेजी से आगे बढ़ने के लिए मजबूर नहीं किया; और (ii) अभियुक्त का इरादा ऊपर बताए गए तरीके से कार्य करते हुए मृतक को आत्महत्या के लिए उकसाने, आग्रह करने या प्रोत्साहित करने का था। निस्संदेह, उकसावे के साथ-साथ मेंसरीया की उपस्थिति भी आवश्यक सहवर्ती है।

इस कानूनी स्थिति की पृष्ठभूमि में, हम इस मामले पर ध्यान दे सकते हैं। आत्महत्या का कारण क्या है, इस प्रश्न का कोई आसान उत्तर नहीं है क्योंकि मनुष्यों में आत्मघाती विचार

और व्यवहार जटिल और बहुआयामी होते हैं। एक ही स्थिति में अलग-अलग व्यक्ति अलग-अलग प्रतिक्रिया करते हैं और अलग-अलग व्यवहार करते हैं क्योंकि वे प्रत्येक घटना में व्यक्तिगत अर्थ जोड़ते हैं, इस प्रकार व्यक्ति की आत्महत्या के प्रति व्यक्तिगत भेद्यता का कारण बनता है। आत्महत्या की प्रत्येक प्रवृत्ति उसके मानसिक दर्द, भय और आत्म-सम्मान की हानि के आंतरिक व्यक्तिपरक अनुभव पर निर्भर करती है। इनमें से प्रत्येक कारक एक व्यक्ति की अपनी जान लेने की भेद्यता में महत्वपूर्ण और वृद्धिकारी योगदानकर्ता है, जो या तो आत्म-सुरक्षा का प्रयास हो सकता है या असहनीय आत्म से पलायन हो सकता है।

41. गंगुला मोहन रेडी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, 2010 (1) स्केल 1 के निर्णय में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की:

"दुष्प्रेरण में किसी व्यक्ति को किसी कार्य को करने के लिए उकसाने या जानबूझकर सहायता करने की मानसिक प्रक्रिया शामिल होती है। आत्महत्या के लिए उकसाने या सहायता करने के लिए अभियुक्त की ओर से सकारात्मक कार्य किए बिना दोषसिद्धि कायम नहीं रह सकती। विधानमंडल की मंशा और इस न्यायालय द्वारा निर्णीत मामलों के

अनुपात से स्पष्ट है कि किसी व्यक्ति को भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अंतर्गत दोषी ठहराने के लिए अपराध करने की स्पष्ट मंशा होनी चाहिए। इसके लिए एक सक्रिय या प्रत्यक्ष कृत्य की भी आवश्यकता होती है जिसके कारण मृतक ने कोई विकल्प न देखकर आत्महत्या कर ली और इस कृत्य का उद्देश्य मृतक को ऐसी स्थिति में धकेलना रहा होगा कि उसने आत्महत्या कर ली।"

(जोर दिया गया)

42. संजु @ संजय सिंह सेंगर बनाम मध्य प्रदेश राज्य, (2002) 5 एससीसी 371 के निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी इसी प्रकार का दृष्टिकोण अपनाया गया था, जिसमें निम्नलिखित टिप्पणी की गई थी:

"भड़काना" शब्द किसी कठोर या अवांछनीय कार्य के लिए उकसाने या प्रेरित करने, या उत्तेजित करने या उकसाने का संकेत देता है। इसलिए, मेन्स रीआ की उपस्थिति आवश्यक सहवर्ती उकसावे की तरह है।" (जोर दिया गया)

43. उपर्युक्त निर्णयों का तात्पर्य यह है कि उकसाने के कृत्य के संबंध में भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अंतर्गत दंडनीय अपराध के लिए किसी अभियुक्त को दोषी ठहराने के लिए अभियोजन पक्ष

द्वारा यह साबित किया जाना आवश्यक है कि अभियुक्त का मृतक को आत्महत्या के लिए उकसाने का "इरादा" था।

44. क्या इस मामले में यह कहा जा सकता है कि बलात्कारियों का मृतक को आत्महत्या के लिए उकसाने का "इरादा" था?

45. उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर स्पष्टतः "नहीं" है, क्योंकि अभिलेख में ऐसी कोई सामग्री नहीं है जिससे यह अनुमान लगाया जा सके कि बलात्कारियों ने मृतक को आत्महत्या के लिए उकसाने के इरादे से उसके साथ बलात्कार किया था।

46. इस प्रकार, हम मानते हैं कि वर्तमान मामले के तथ्यों के आधार पर, अभियुक्तों के बलात्कारियों को मृतक को आत्महत्या के लिए उकसाने के अपराध के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है।"

47. माननीय सर्वोच्च न्यायालय, दिल्ली उच्च न्यायालय और इस न्यायालय द्वारा ऊपर उद्धृत निर्णयों में निर्धारित कानून की कसौटी पर वर्तमान मामले के तथ्यों का विश्लेषण करने पर , यह सुरक्षित रूप से माना जा सकता है कि अपीलकर्ताओं द्वारा कोई उकसावा/उत्तेजना नहीं थी।

48. अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य और बचाव पक्ष के साक्ष्य के मद्देनजर, धारा 376 और 306 आईपीसी के तहत दंडनीय अपराधों के

लिए अपीलकर्ताओं की दोषसिद्धि कायम नहीं रखी जा सकती है और इसे रद्द और रद्द किया जाना चाहिए।

49. उपरोक्त विवेचनाओं के आलोक में, वर्तमान अपील स्वीकार किए जाने योग्य है और इसके द्वारा स्वीकार की जाती है। विचारण न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 25.09.1991 के आक्षेपित निर्णय को अपास्त किया जाता है और अपीलकर्ताओं को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 और 306 के अंतर्गत दंडनीय दोनों अपराधों से बरी किया जाता है।

50. अपीलकर्ताओं के जमानत बांड और जमानत बांड उन्मोचित किये जाते हैं।

51. विचारण न्यायालय का अभिलेख वापस लौटाया जाए।

52. इस निर्णय की प्रति जेल रिकॉर्ड को अद्यतन करने के लिए अधीक्षक, केन्द्रीय कारागार, भरतपुर को भेजी जाए।

53. धारा 437-ए सीआरपीसी के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, अपीलकर्ताओं को निर्देश दिया जाता है कि वे इस न्यायालय के रजिस्ट्रार (न्यायिक) के समक्ष 50,000/- रुपये के व्यक्तिगत बांड और समान राशि का एक जमानत बांड प्रस्तुत करें, जो छह महीने की अवधि के लिए प्रभावी होगा, और यह वचन दें कि इस निर्णय के विरुद्ध विशेष अनुमति याचिका दायर होने या अनुमति प्रदान किए जाने की स्थिति

में, वे इसकी सूचना प्राप्त होने पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष उपस्थित होंगे।

(अनूप कुमार ढांड) ,जे

कु डी/3

अस्वीकरण: इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निशपादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।



अधिवक्ता अविनाश चौधरी